अध्याय : 5

हठयोग के ग्रन्थ

इस अध्याय को भाग 'अ' और भाग 'ब' दो भागों में विभक्त किया गया है। भाग 'अ' में प्रमुख हठयोगिक ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय और भाग 'ब' में हठप्रदीपिका और घेरण्ड संहिता के आधार पर विभिन्न हठयोगिक अवधारणाएं और उनमें तुलना की गयी है।

भाग (अ)

हठयोगिक ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय

1. योगबीज
2. गोरक्ष संहिता
3. शिव संहिता
4. वशिष्ठ संहिता
5. सिद्धसिद्धान्त पद्धति
6. हठप्रदीपिका
7. घेरण्ड संहिता
8. हठरत्नावली

उपरोक्त ग्रन्थ हठयोग के प्रमुख ग्रन्थ माने जाते हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है :

1. योग बीज का परिचय

इस ग्रंथ में मुख्य वक्ता भगवान शिव हैं, जिन्हें ईश्वर, महादेव, आदिनाथ आदि नाम से पुकारा गया है और प्रश्न कर्ता माता पार्वती हैं, जिन्हें देवी नाम से भी सम्बोधित किया गया है। ग्रंथ में कुल 201 श्लोक हैं, जिसमें माता पार्वती द्वारा 12 प्रश्न और भगवान शिव द्वारा उनके उत्तर दिए गए हैं। इस ग्रंथ के अनुसार मुक्ति का उपाय नाथ मार्ग या सिद्धि मार्ग ही है और 'कैवल्य' ही परम पद है, जिसकी प्राप्ति किसी अन्य साधना पद्धतियों से नहीं केवल सिद्धि मार्ग से ही हो सकती है। इस ग्रंथ में परम तत्व आत्मा को माना गया है, जो पाप–पुण्य के फलों से आबद्ध होने पर जीव के रूप में परिणित हो जाता है।

योग क्या है?

इस प्रश्न के उत्तर में भगवान शिव कहते हैं कि ''प्राण–अपान का, अपने रजस और वीर्य का, सूर्य नाड़ी और चंद्र नाड़ी से प्रवाहित प्राण का, जीवात्मा–परमात्मा का और विविध द्वन्द्वों का मिलन कर देना योग है''।

योग का अभ्यास कैसे करें?

इस प्रश्न के उत्तर में ग्रंथ का कहना है योग साधक को सर्व प्रथम ऐसे गुरू की खोज करनी चाहिए जिसको प्राणायाम की सिद्धि प्राप्त हो चुकी हो। ऐसे गुरु की सेवा करके उसकी कृपा प्राप्त करें और कृपा पूर्वक गुरु के वस्त्र प्राप्त करके प्राणों पर विजय प्राप्त करें। शक्ति चालन क्रिया के अभ्यास पर विशेष बल देते हुए कहा गया है कि वज्रासन में बैठकर 15 दिन तक शक्ति चालन का अभ्यास करना चाहिए। 15 दिन में शक्ति चालन का अभ्यास हो जाता है। यह शक्ति चालन का अभ्यास बाह्य कुंभक में अग्निसार के समान है।

कुम्भक :

इस ग्रंथ में प्राणायाम अर्थात् कुम्भक के दो भेद सहित कुंभक और केवल कुंभक बतलाए गए हैं, जिसमें सहित कुंभक के चार भेद **सूर्यभेद, उज्जयी, शीतला और भस्त्री है।** ग्रन्थ में उपरोक्त चारों सहित कुम्भकों का अभ्यास यदि तीन बंधों के साथ किया जाता है, तो केवल कुंभक की प्राप्ति होती है। यहां तीन बंधों के अंतर्गत मूलबंध, उड्डियान बंध और जालंधर बंध का उल्लेख किया गया है।

प्राणायाम अभ्यास विधिः

साधक को सर्व प्रथम वज्रासन में बैठकर कुंडलिनी संचालन करें तदोपरांत तीनों बंधों के साथ चारों प्राणायाम का अभ्यास करें। त्रिबंधों सहित प्राणायाम के अभ्यास से केवल कुंभक की सिद्धि हो जाती है। केवल कुंभ की सिद्धि से कुंडलिनी जागरण अर्थात कुंडलिनी सुषुम्ना में प्रवेश कर जाती है। तदोपरांत स्वधिष्ठान चक्र के पास ऊपर ब्रह्म ग्रंथि का भेदन हो जाता है। ब्रह्म ग्रंथि के भेदन के बाद अनाहत चक्र अर्थात् हृदय स्थान के निकट विष्णु ग्रंथि का वेतन होता है। विष्णु ग्रंथि के भेदन के बाद आज्ञा चक्र के निकट रूद्र ग्रंथि का भी भेदन हो जाता है, उसके बाद रेचक और पूरक के लय होने से प्राणों का पूर्ण लय हो जाता है, जिसे नाथ संकेत या सिद्ध संकेत भी कहते हैं। इससे केवल प्राणायाम की सिद्धि हो जाती है, तदोपरांत कैवल्य पद की प्राप्ति होती है।

इस ग्रंथ में योग के चार प्रकार मंत्रयोग, लययोग, हठयोग और राजयोग का उल्लेख किया गया है।

मंत्रयोगः जीव द्वारा निरंतर सोऽहम् मंत्र का जपना मंत्र योग कहलाता है।

लययोग : क्षेत्र जीव की संज्ञा और क्षेत्रज्ञ परमेश्वर की संज्ञा है। इन क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ की एकता की सिद्धि को ही लययोग कहते हैं।

हठयोग : जब सूर्य और चंद्र का ऐक्य हो जाता है, तो इसे हठयोग कहते हैं। यहां 'ह' का अर्थ सूर्यनाड़ी और ठाकर का अर्थ चंद्रनाड़ी है।

राजयोग : जिस योग साधना द्वारा प्रत्येक प्राणी में विद्यमान 'रज' और 'रेतस्' अर्थात वीर्य का एकी भाव हो जाता है, उसे राजयोग कहते हैं।

जब प्राण–अपान का समायोजन होकर दोनों का ऐक्य सिद्ध हो जाता है, तब मंत्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग चारों की सिद्धि हो जाती है।

2. गोरक्ष संहिता का परिचय

ग्रंथ का उद्देश्य : इस ग्रंथ की रचना योगियों के हित और उनके लिए परमानंद की प्राप्ति हेतु की गई है।

योग के अंग : इस ग्रंथ में योग के छह अंग माने गए हैं, यथाः आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

1. **आसन** : इस ग्रन्थ में दो सिद्धासन और पद्मासन का उल्लेख किया गया है। ग्रन्थ में आसन का लाभ रोगों का नाश बतलाया गया है।
2. **प्राणायाम** : ग्रन्थ में प्राणायाम को रेचक, पूरक और कुम्भक के आधार पर विभक्त करते हुए इसके तीन भेद बतलाये गये हैं। ग्रन्थ के अनुसार प्राणायाम के अभ्यास से पापों का क्षय होता है।
3. **प्रत्याहार** : गोरक्ष संहिता के अनुसार ''ज्ञानेन्द्रियों द्वारा उसके विषय का अनुभव करके उन–उन इन्द्रियों द्वारा अपने–अपने विषय से पृथक कर लेना ही प्रत्याहार कहलाता है।'' इस ग्रंथ के अनुसार प्रत्याहार के अभ्यास से मानसिक विकारों का नाश हो जाता है। ग्रंथ में प्रत्याहार के 5 भेद माने गये हैं।
4. **धारणा** : हृदय में मन की निश्चलता के पंचभूतों को पृथक–पृथक धारण करना ही धारणा कहलाती है। धारणा के अभ्यास से धैर्य की प्राप्ति होती है। यहां धारणा के 5 भेद बतलाये गये हैं।
5. **ध्यान** : 'स्मृ' धातु सर्व चिन्तन वाचक है। अपने चित्त में आत्म तत्त्व का चिन्तन करें। यही चिन्तन ध्यान कहलाता है। ध्यान के अभ्यास से अद्भुत चैतन्य शक्ति की प्राप्ति होती है। यहां ध्यान के दो भेद सगुण और निर्गुण बतलाये गये हैं। सगुण ध्यान का फल अष्टसिद्धियाँ और निर्गुण ध्यान से समाधि की प्राप्ति मानी गयी है।
6. **समाधि** : जब तक ज्ञानेन्द्रियों में उनके विषय का किंचित मात्र भी अंश विद्यमान रहता है, तब तक ध्यानावस्था रहती है, और जब पंच ज्ञानेन्द्रियों की वृत्तियां निःशेष भाव से आत्मा में लीन हो जाती है, तब समाधि की अवस्था होती है। इस ग्रन्थ के अनुसार समाधि के द्वारा शुभ–अशुभ कर्मों का त्याग और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

चक्र : ग्रंथ में छः चक्रों का उल्लेख है – 1. मूलाधार चक्र 2. स्वाधिष्ठान चक्र 3. मणिपुर चक्र 4. अनाहत चक्र 5. विशुद्धि चक्र और 6. आज्ञा चक्र।

नाड़ियों की संख्या और उत्पत्ति स्थान : इस ग्रंथ में 72000 नाड़ियों का उल्लेख माना गया है, जिनमें 72 नाडियां प्रमुख हैं। उन 72 नाडियों में भी 10 नाडियां प्रमुख मानी गई हैं। सभी नाडियों

की उत्पत्ति **कंद** से होती है, जिसका स्थान मूलाधार से ऊपर और नाभि से नीचे है। उपरोक्त 10 प्रमुख नाडियों में भी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना जो सबसे प्रमुख तीन नाडियां हैं, उनके देवता क्रमशः चंद्र, सूर्य और अग्नि हैं।

10 वायुः ग्रन्थ में 10 प्रकार की वायु का उल्लेख है– यथा 1. प्राण 2. अपान 3. समान 4. उदान 5. व्यान 6. नाग 7. कूर्म 8. कृकल 9. देवदत्त और 10. धनंजय हैं। इनमें प्राण का स्थान हृदय, अपान का स्थान गुदा, समान का स्थान नाभि, उदान का स्थान कण्ठ, व्यान का स्थान समस्त शरीर माना गया है। शेष पाचों प्राण इन्हीं के क्रमशः उपप्राण है। इन उपप्राणों के कार्यों में नाग का कार्य डकार लाना, कूर्म का पलक झपकाना, कृकल का झींक उत्पन्न करना, देवदत्त का कार्य जम्हाई लाना और धनंजय का कार्य मृत्यु के बाद भी चार घड़ी तक शरीर के सभी अंगों को गर्म रखना है।

प्राण अपान और जीव का संबंध : ग्रंथ में बताया गया है कि जैसे गेंद खेलने वालों के वश में रहती है, उसी प्रकार प्राण और अपान के वश में जीव रहकर ऊपर–नीचे गिरता और उठता रहता है, और वाम–दक्षिण मार्ग में चंचल होने के कारण दृश्यमान भी नहीं होता। जैसे पंछी के पांव डोरी बांधकर ढीला छोड़ देने पर वह उड़ता तो है परन्तु खींचने पर निकट आ जाता है, ठीक उसी प्रकार गुणों के द्वारा बंधा हुआ जीव भी प्राण–अपान द्वारा खींचा जाता है। आज्ञा चक्र में स्थित प्राण वायु मूलाधार में स्थित अपान वायु को ऊपर की ओर खींचता है और मूलाधार में स्थित अपान वायु आज्ञा चक्र से नीचे की ओर खींचता है। इस प्रकार जीव प्राण–अपान वायु द्वारा ऊपर नीचे खींचा जाता है।

हंस मंत्र एवं अजपा जप :

जीव हकार वृत्ति से बाहर आता है और सकार ध्वनि से अंदर जाता है। इस प्रकार वह सदा हंस मंत्र का जप करता रहता है। यह जीव दिन–रात अर्थात 24 घंटे में 21600 मंत्रों का जप करते हुए चलता रहता है। इसे ही अजपा गायत्री भी कहते हैं। यह मोक्ष दायिनी है। इसके संकल्प मात्र से सभी पापों का छय हो जाता है। न ही इसके समान कोई विद्या है और न ही इसके समान कोई जप, और न ही इसके समान कोई भूत–भविष्य में कोई ज्ञान ही होगा। कुंडली महाशक्ति से उत्पन्न यह गायत्री महाशक्ति प्राणधारिणी, प्राणविद्या और महाविद्या है। जो इसे जानता है, वही वेद जानता है।

पंचमुद्रा : इस ग्रंथ में महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डियानबंध, जालंधरबंध और मूलबंध का उल्लेख किया गया है। यहां पर नभोमुद्रा को ही खेचरी मुद्रा कहा गया है, जबकि घेरंड संहिता में खेचरी मुद्रा और नभोमुद्रा में भेद है।

खेचरी मुद्रा (नभोमुद्रा) बिंदु–रज और परमपद : बिंदु शरीर का मूल है। यह शरीर में पांव से सिर तक प्रतिष्ठित रहता है। शरीर की शक्ति और शिराओं की सजीवता का आधार यह बिंदु ही

है। जब तक शरीर में बिंदु स्थित है, तब तक मृत्यु का भय नहीं और जब तक नभोमुद्रा दृढ़ता से बंधी है तब तक बिंदु चलायमान नहीं हो सकता। इस ग्रंथ में बिंदु के दो भेद बताए गए हैं– **1. पांडुर वर्ण 2. लोहित वर्ण।**

पांडू वर्ण शुक्र या बिंदु चंद्र स्थान में रहता है और तैल मिश्रित सिंदूर वर्ण रज नाभि मंडल में स्थित है। इन दोनों का एक्य अत्यंत दुर्लभ है। बिन्दु शिव है और रज शक्ति है अथवा चंद्र बिंदु है और रज सूर्य है। इन दोनों के संयोग से परम शरीर की प्राप्ति होती है। वायु द्वारा शक्तिचालिनी के अभ्यास से जब रज आकाश से प्रेरित होकर बिंदु के साथ मिल जाता है तब शरीर दिव्य बन जाता है। शुक्र बिंदु रज से संयुक्त है और रज बिंदु चंद्र से युक्त है। जो इन दोनों की समरसता को जानता है, वही योग का ज्ञाता है। नाड़ी जाल के शोधनार्थ चंद्र–सूर्य को संयुक्त किया जाता है। यह रसों को ठीक प्रकार से शोषण करने वाली महामुद्रा कहलाती है।

वायु–बिंदु संबंध :

चले वाते चलो बिंदु, निश्चले निश्चलो भवेत।

योगी स्थाणुत्वामाप्नोति, ततो वायुं निरूद्धयेत। गोरक्ष संहिता 1/86

अर्थात् प्राण वायु के चंचल होने पर बिंदु भी चंचल रहता है और प्राणवायु के निश्चल हो जाने पर बिंदु भी चलायमान नहीं होता। प्राणवायु की स्थिरता में ही स्थाणुता संभव है इसलिए प्राण वायु का निरोध करें।

नाड़ीशोधन प्राणायाम : बद्धपद्मासन में चंद्रनाड़ी से पूरक करने के बाद यथाशक्ति कुंभक करके सूर्यनाड़ी से रेचक करें। श्वेत वर्ण दही के समान अमृत रूप चंद्र बिम्ब का ध्यान करने से प्राणायाम करने वाला सुखी होता है। दक्षिण नासारन्ध्र से वायु खींचकर धीरे–धीरे पूरक करें और विधान पूर्वक कुंभक करके वायु को चंद्रनाड़ी से रेचक करें। यहां पर दैदीप्यमान अग्निपुंज के समान सूर्य मंडल का ध्यान अपनी नाभि पर करने से प्राणायामी सुखी होता है।

इस प्रकार ग्रन्थ में नाड़ी शोधन प्राणायाम करते समय चन्द्रनाड़ी से पूरक करने के बाद कुम्भक में चंद्र बिम्ब का ध्यान और दायीं नासिका से पूरक के बाद कुम्भक में सूर्य मंडल के ध्यान का विधान बतलाया गया है।

इस ग्रंथ में प्राणायाम की तीन अवस्थाएं क्रमशः प्रथम, मध्यम और उत्तम बताई गई हैं।

प्रथम अवस्था में पूरक, कुंभक और रेचक का अनुपात क्रमशः 12 : 16 : 10 मध्यम अवस्था में 24 : 32 : 20 और उत्तम अवथा में 36 : 48 : 30 का बतलाया गया है।

प्राणायाम में पसीना, कपकपी और ऊपर उठना भी क्रमशः प्रथम, मध्यम और उत्तम प्राणायाम के लक्षण बताए गए हैं।

यहां पर प्राणायाम को पूरक, कुंभक और रेचक के आधार पर विभाजित करते हुए इनके तीन भेद माने गये हैं।

3. शिव संहिता का परिचय

शिव संहिता नामक ग्रंथ शिव द्वारा पार्वती को उपदेश के रूप में प्राप्त हुआ है। इस यह ग्रंथ पांच पटल और 641 पद्यों से युक्त है। ग्रंथ का प्रथम पटेल **लय प्रकरण** के नाम से जाना जाता है, जो 104 पद्यों से युक्त है। 57 पद्यों से युक्त द्वितीय पटल जिसमें तत्व ज्ञान का उपदेश और वैश्वानर अग्नि का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ के अनुसार शरीरस्थ चेतना 3 लाख 50 हजार नड़ियों में प्रवाहित होती है, जिसमें इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना प्रमुख तीन नड़ियां हैं। सुषुम्ना के अंतर्गत चित्रा नाड़ी का उल्लेख किया गया है, जिसके अंतर्गत कुंडलिनी शक्ति को माना गया हैं। ग्रंथ का तृतीय पटल योगाभ्यास नाम से जाना जाता है। इस पटल में 118 पद्य हैं, जिसमें पंच प्राणों और पंच उपप्राणों का उल्लेख किया गया है। ग्रंथ में गुरु की महिमा का विशेष महत्व दिया गया है। इसके अनुसार गुरु के मुख से प्राप्त विद्या ही फलवती होती है। बिना गुरु मुख से प्राप्त विद्या दुखदाई और फलहीन मानी गई है। ग्रंथ में माता–पिता और गुरु का विशेष स्थान है। योग साधक को अपनी सेवा द्वारा इन्हें प्रसन्न रखना चाहिए, तभी योग की सिद्धि प्राप्त हो सकेगी, अन्यथा नहीं। गुरु महिमा के बाद कुंभक सहित अनुलोम विलोम प्राणायाम का अभ्यास नाड़ी शोध के लिए बतलाया गया है। इसे प्रातः, मध्यदिन, सांय और अर्धरात्रि में 20–20 बार करने का परामर्श दिया गया है। इस प्रकार के अभ्यास से दो मास में नाड़ियों को शुद्धि होकर सभी दोष नष्ट हो जाते हैं।

ग्रंथ में योग की चार अवस्थाओं का वर्णन किया गया है, जो क्रमशः आरंभ अवस्था, घटावस्था, परिचय अवस्था और निष्पत्ति अवस्था के क्रम से उत्पन्न होती हैं। ग्रंथ में **सिंहासन, पद्मासन, उग्रासन और स्वास्तिक** आसन का उल्लेख किया गया है।

ग्रंथ का चतुर्थ अटल मुद्रा प्रकरण के नाम से जाना जाता है। इस पटल में योनिमुद्रा, महाबंध, महावेध, खेचरी, जालंधर बंध, मूलबंध, उड्डियान बंध, विपरीत करणी, वज्रोली और शक्तिचालिनी मुद्राओं का उल्लेख किया गया है।

ग्रंथ के पंचम पटल में पार्वती द्वारा योग मार्ग के विभिन्न का प्रश्न पूछा गया है, जिस पर भगवान शिव ने उत्तर देते हुए भोग को योग मार्ग का सबसे बड़ा विघ्न बतलाया है। ग्रंथ के अनुसार नारी सैय्या, आसन, वस्त्र, धन, ताम्बूल भक्षण, राज्य ऐश्वर्य की विभूतियां, सोना, चांदी, ताम्र, रत्न, गोधन, पांडित्य, वेदशास्त्र, नृत्य गीत, आभूषण, वंशी, वीणा, मृदंग, हाथी, घोड़ा आदि वाहन, स्त्री, पुत्र आदि भोग के साधन योग मार्ग के महाविघ्न हैं।।

4. वशिष्ठ संहिता का परिचय

वशिष्ठ संहिता में मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठ और उनके पुत्र शक्ति के मध्य संवाद हुआ है। ग्रंथ में मुनि वशिष्ठ के पुत्र शक्ति अपने पिता से प्रश्न करते हुए कहते हैं कि ''सभी शास्त्रों के ज्ञाता जीव मात्र के हितैषी हे भगवन किस उपाय से मैं मंदबुद्धि अनेकों भयों से युक्त, जन्म –मृत्य, जरा आदि से युक्त दुःखों से परिपूर्ण इस संसार से ज्ञान प्राप्त कर मुक्त होऊगा?

अपने पुत्र के उत्तर में मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठ कहते हैं ''हे गुरु भक्त, मुनिश्रेष्ठ, जितेन्द्रिय आओ और मुक्ति के लिए जो कुछ मुझे ब्रह्मा ने कहा था, वह तुम सुनो।

एक समय पद्मासन में बैठकर चतुर्मुख ब्रह्म देव के पास जाकर मैंने यही प्रश्न किया था, जो आप मुझसे पूछ रहे हो। एक समय मैं ब्रह्म जी के पास जाकर बोला है देव अनेकों शास्त्र में विभ्रान्त हो जाने पर अस्थिर चित्त होकर मैं घूमता हूँ। हे पितामह अजर, आनंद, गूढ़ उस अंतिम परमपद को मैं कैसे जाऊंगा?

मेरे कहने पर ब्रह्मा जी बोले जीव मात्र को वेदोक्त दोनों प्रकार के मार्गों को समझना चाहिए।

तदोपरान्त उन्होंने अष्टांगयोग का उपदेश दिया जिसके क्रमशः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये आठ अंग हैं।

इन आठ अंगों को बहिरंग और अंतरंग दो भागों में विभक्त किया गया है, जिसमें यम नियम आसन और प्राणायाम प्रारंभिक चार अंग बहिरंग योग माने गए हैं और अंतिम चार प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि अंतरंग योग में शामिल हैं।

यम–निमय : यम और नियम की 10–10 संख्या मानी गई है।

आसन : ग्रंथ में कुल 10 आसनों का उल्लेख किया गया है, जिनमें मोक्ष की प्राप्ति हेतु चार आसनों को मुख्य माना गया है। उल्लेखित 10 आसन इस प्रकार हैं :–

1. स्वास्तिकासन 2. गोमुखासन 3. पद्मासन 4. वीरासन 5. सिंहासन
6. मयूर आसन 7. कुक्कुटासान 8. कूर्म आसन 9. भद्रासन 10. मुक्त आसन।

नाड़ी और पंचप्राण : ग्रंथ में 72000 नाड़ियों का उल्लेख किया गया है, जिसमें 14 नाड़ियों को प्रमुख माना गया है। प्राण, अपान, सामान, उदान और व्यान इन पांच प्राणों का उल्लेख करते हुए इनके पांच उपप्राण नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनंजय का उल्लेख किया गया है। नाडी शुद्धि के लक्षणों का उल्लेख करते हुए शरीर में लघुता, जठराग्नि का प्रदीप्त होना और नाद का आविर्भाव होना नाड़ी शुद्धि का लक्षण बतलाया गया है।

प्राणायाम : प्राण और अपान का उचित संयोग प्राणायाम कहलाता है। यह रेचक, पूरक और कुंभक से बनता है। अतः इनके आधार पर प्राणायाम के तीन भेद माने गये है। ग्रंथ में प्रणव और प्राणायाम को अभिन्न माना गया है। प्राणायाम के अभ्यास में पूरक, कुंभक और रेचक का अनुपात क्रमशः 1 : 4 : 2 का बतलाया गया है। अतः इस अनुपात में 16 : 64 और 32 मात्रा में पूरक, कुंभक और रेचक करने का परामर्श दिया गया है। प्राणायाम सिद्धि के लक्षण बताते हुए

स्वेदन, कंपन और भूमि से ऊपर उठना इन्हें क्रमशः अधम, मध्य और उत्तम प्राणायाम का लक्षण बतलाया गया है। केवल कुम्भक को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि **''रेचक और पूरक रहित सुखपूर्वक वायु धारण करना केवल कुम्भक कहलाता है।** इस कुंभक की सिद्धि से नाद की उत्पत्ति होती है।

प्रत्याहार : विषयों में स्वाभाविक रूप से विचरण करने वाली इंद्रियों को उनसे बलपूर्वक पीछे लौटाना ही प्रत्याहार कहलाता है। इसके चार भेद बताए गए हैं।

धारणा : इस ग्रन्थ में धारणा के 05 भेद बतलाए गए हैं।

ध्यान : अष्टांग योग का सातवें अंग ध्यान के दो भेद सगुण और निर्गुण बतलाए गए हैं। सगुण ध्यान के पुनः पांच प्रकार माने गए हैं। निर्गुण ध्यान को परिभाषित करते हुए कहा गया है ''मैं ब्रह्म के समान ब्रह्ममय बनूं ऐसी संवेदना होना ही निर्गुण ध्यान है।''

समाधि : समाधि को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि ''जीवात्मा और परमात्मा की एकता ही समाधि है। आत्मा का परमात्मा के साथ एकाकार हो जाना ही समाधि है।'' मुक्ति प्राप्ति के सन्दर्भ में उल्लेख करते हुए कहा गया है कि ''ज्ञान के साथ निष्काम कर्म अनुष्ठानों को करने से मुक्ति प्राप्त होती है''

5. सिद्धसिद्धान्त पद्धति का परिचय

हठयोगी गोरखनाथ द्वारा लिखित सिद्धसिद्धांत पद्धति 6 अध्यायों में विभक्त है, जिसमें प्रथम अध्याय–पिण्ड उत्पत्ति विचार, द्वितीय अध्याय–पिण्ड विचार, तृतीय अध्याय–पिण्ड ज्ञान, चतुर्थ अध्याय–पिण्डाधार, पंचम अध्याय–पिण्ड और पद सामरस्य कैसे होता है?, और षष्टम् अध्याय–अवधूत योगी के लक्षण के रूप में प्रतिपादित हैं।

प्रमुख नाड़ियाँ : इस ग्रंथ में गोरक्षनाथ जी ने 10 नाड़यों को प्रमुख माना है, जो इस प्रकार हैं:

1. इडा	2. पिंगला	3. सुषुम्ना	4. सरस्वती	5. पूषा
6. अलम्बुषा	7. गांधारी	8. हस्तजिह्वा	9. कुहू	10 शंखिनी

चक्र : सिद्धसिद्धांत पद्धति में चक्र की संख्या 9 मानी गई हैं, जो इस प्रकार हैं :

1. ब्रह्मचक्र	2. स्वाधिष्ठानचक्र	3. नाभिचक्र	4. अनाहतचक्र	5. कण्ठ
6. तालुचक्र	7. भ्रूचक्र	8. ब्रह्मरन्ध्र/निर्वाणचक्र		9. आकाश चक्र

योग के अंग : ग्रंथ में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि रूपी अष्टांगयोग का वर्णन किया गया है।

1. **यम** : सभी इंद्रियों पर विजय अर्थात इंद्रिय संयम यम कहलाता है।

2. **नियम** : मन की वृत्तियों पर नियंत्रण करना नियम कहलाता है। अकेले रहना, संगति से दूर रहना, जितना मिले उतने में पूर्ण प्रसन्न रहना, सभी के प्रति वैराग्य, गुरु के निर्देशों का पालन आदि सब नियम के लक्षण हैं।
3. **आसन :** सत्, चित् स्वरूप में विद्यमान रहना आसन है। ग्रंथ में स्वास्तिक आसन, पद्मासन और सिद्धासन अर्थात् तीन आसनों का उल्लेख किया गया है।
4. **प्राणायाम** : प्राणों की स्थिरता का नाम प्राणायाम है। रेचक, पूरक, कुंभक और संघट्ट करणानि। अर्थात् ये चारों प्राणायाम के लक्षण हैं।
5. **प्रत्याहार :** प्रत्याहार का अर्थ है आत्मा के घोड़े इंद्रियों के विषयों से लौटा लेना। विकारों को दूर करना। उत्पन्न हो रहे विकारों की निवृत्ति। ये सभी प्रत्याहार के लक्षण हैं।
6. **धारणा** : वह बाहर और अंदर एक ही है। यही निज स्वरूप है। अपने इस निज स्वरूप को अंतःकरण में स्थिर करें। जिस प्रकार और जैसा भाव उत्पन्न होता है, उस सबको निराकरण आत्मा में ही धारण करें। अपने मन को वायु रहित स्थान पर रख दीपक की लौ की भांति स्थिर करें, यही धारणा है।
7. **ध्यान** : सभी प्राणियों में समान दृष्टि का होना ध्यान है। यह ध्यान एक परम अद्वैत भाव है। चित्त में जैसा और जो भाव प्रकट होता है, वह आत्मा ही है।
8. **समाधि** : प्रयत्न रहित अवस्था (स्थिति) का नाम समाधि है। समाधि के लक्षण इस प्रकार बतलायें गए हैं–
   1. अंतःकरण में सभी तत्वों की सम अवस्था हो जाती है।
   2. मन में सभी क्रियाओं का अभाव रहता है।
   3. स्थित प्रयन्त रहित हो जाती है।

6.हठप्रदीपिका का परिचय

हठप्रदीपिका के लेखक स्वामी स्वात्माराम हैं। चौहदवीं–पंद्रहवीं शताब्दी में कुछ मुठ्ठी भर लोग अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए विकृतियाँ उत्पन्न करने लगे, वे लोग जान बूझकर हठयोग के अर्थ उद्देश्य आदि को लेकर गलत प्रचार करने लगे। चौहदवीं–पंद्रहवीं शताब्दी में ऐसे ही तत्वों ने हठयोग, राजयोग को परस्पर विरोधी होने का भ्रम फैलाया तब स्वात्माराम जी ने हठ प्रदीपिका ग्रन्थ की रचना कर प्रथम श्लोक में ही यह स्पष्ट कर दिया कि हठयोग और राजयोग परस्पर विरोधी नहीं पूरक हैं तथा हठयोग का उद्देश्य राजयोग की प्राप्ति है। स्वामी स्वात्माराम सूरी कृत हठप्रदीपिका हठयोग का प्रामाणिक ग्रंथ है। ग्रन्थ में पांच उपदेशों को प्रतिपादित करते हुए इसे पांच अध्यायों में विभक्त किया गया है। ग्रंथ के उद्देश्य को प्रारंभ में ही स्पष्ट करते हुए इसे राजयोग प्राप्ति का साधन माना गया है। इस ग्रंथ में हठयोग के चार अंग क्रमशः आसन, प्राणायाम, मुद्रा–बंध और नादानुसंधान माने गये हैं। ग्रंथकार ने हठयोग साधना में गुरु के मार्गदर्शन में योगाभ्यास करने पर बल दिया गया है।

प्रथम उपदेश जिसका उल्लेख प्रथम अध्याय में किया गया है, के अंतर्गत 10 यम और 10 नियमों का उल्लेख करते 15 आसनों का वर्णन किया गया है। इस उपदेश के अंतर्गत 6 साधक और 6 बाधक तत्वों का भी उल्लेख है। स्वात्माराम सूरी जी ने उल्लेखित 15 आसनों में सिंद्धासन, पद्मासन, सिंहासन और भद्रासन, इन चार आसनों को प्रमुख माना है और सिद्धासन को इन चारों में भी सर्वोत्तम बतलाया है।

द्वितीय उपदेश में प्राणायाम की चर्चा की गई है। प्राणायाम अभ्यास पूर्व नाड़ी शुद्धि के महत्व पर विशेष बल देते हुए नाड़ी शोधन अभ्यास की विधि बतलाई गई है। इसी उपदेश में षट्कर्मों का भी उल्लेख किया गया है। ग्रंथ के अनुसार शोधन क्रियाओं का अभ्यास उन्हें करने की कोई आवश्यकता नहीं है, जिनमें वात, पित्त और कफ ये तीनों दोष सामान्य है।

ग्रन्थ में आठ प्रकार के कुम्भकों का वर्णन करते हुए इनके अभ्यास से केवल कुम्भक की सिद्धि बतलाई है।

तीसरा उपदेश मुद्रा और बंध नाम से है, जिसके अंतर्गत 10 प्रकार की मुद्राओं का उल्लेख किया गया है। इन 10 मुद्राओं के अंतर्गत चार बंध भी शामिल हैं। प्राणायाम के अभ्यास को युक्ति पूर्वक करने पर विशेष बल दिया है। ग्रंथ के अनुसार युक्त पूर्वक प्राणायाम का अभ्यास विभिन्न प्रकार के रोगों का क्षय करता है और अयुक्ति पूर्वक प्राणायाम का अभ्यास विभिन्न प्रकार के रोगों को उत्पन्न भी करता है।

ग्रंथ का चौथा अध्याय नादानुसंधान नाम से जाना जाता है, जिसमें नाद सहित समाधि की चारों अवस्थाओं का उल्लेख किया गया है, जो क्रमशः आरंभावस्था, घटावस्था, परिचयावस्था और निष्पत्ति अवस्था के क्रम से घटित होती हैं।

ग्रंथ का अंतिम उपदेश योग साधना के मध्य आहार–विहार आदि में व्यतिक्रम होने से कौन–कौन से रोग उत्पन्न होते हैं, इस पर प्रकाश डाला गया है। यह अध्याय योग साधना के साथ–साथ योग की चिकित्सीय पक्ष को प्रकाशित करता है। स्वात्माराम सूरी जी के अनुसार मिताहार के समान कोई यम नहीं है, अहिंसा के समान कोई नियम नहीं और सिद्धासन के समान कोई आसन नहीं है।

7. घेरण्ड संहिता

घेरण्ड संहिता महर्षि घेरण्ड द्वारा प्रतिपादित ग्रंथ है, जिसमें घटस्थ योग के संदर्भ में महर्षि घेरण्ड और राजा चण्डकपालि के मध्य संवाद हुआ है। ग्रंथ के प्रारंभ में ही राजा चण्डकपालि महर्षि घेरण्ड से तत्वज्ञान का कारण घटस्थ योग को जानने की जिज्ञासा प्रकट करते हैं।

महर्षि घेरण्ड राजा चण्डकपालि के प्रति उत्तर देते हुए कहते हैं ''हे राजन माया के समान कोई पाप नहीं, योग के समान कोई बल नहीं, ज्ञान के समान कोई मित्र नहीं और अहंकार के समान कोई शत्रु नहीं है। जिस प्रकार 'क' वर्ग आदि वर्णों के क्रम पूर्वक अभ्यास करने से शास्त्रों का ज्ञान संभव है, उसी प्रकार योग के नियमित अभ्यास से तत्व ज्ञान की प्राप्ति होती है।''

राजा चण्डकपालि के प्रति महर्षि घेरण्ड घटस्थ योग का उपदेश देते हुए इसके शोधन, दृढ़ता, धैर्य, लघुता, प्रत्यक्ष और निर्लिप्त भाव के रूप में सात साधन बतलाये हैं, जिनके लिए क्रमशः षट्कर्म, आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि का अभ्यास बतलाया है।

उपरोक्त सप्त साधनों के क्रम में इस ग्रन्थ में सात अध्याय प्रतिपादित हैं। प्रथम अध्याय में षट्कर्मों का विस्तार से विवेचन किया गया है। दूसरे अध्याय में 32 प्रकार के आसनों का उल्लेख है। तीसरे अध्याय में 25 मुद्राओं का उल्लेख किया गया है, जिसमें चार बंध और पांच प्रकार की धारणाएं सम्मिलित हैं। चौथें अध्याय में प्रत्याहार का वर्णन करते हुए महर्षि घेरण्ड ने इसके अभ्यास से कामादि शत्रुओं का नाश होना बतलाया है। महर्षि घेरण्ड कहते हैं कि यह चंचल मन जहां–जहां विचरण करें उसे वहां से लौटा कर आत्मा के वश में करने का प्रयत्न करें। पुरस्कार–तिरस्कार आदि रुचिकर अथवा अरुचिकर वचनों से मन को हटाकर आत्मा के वश में करें। सुगंध और दुर्गंध से मन को हटा ले। मधुर, अम्ल, तिक्त आदि रसों से मन को हटाकर आत्मा के वशीभूत करें। इस प्रकार पांच ज्ञानेंद्रिय से प्राप्त होने वाले विषयों से मन को बार–बार हटाकर आत्मा के वशीभूत करने का अभ्यास प्रत्याहार के अन्तर्गत बतलाया गया है।

पांचवें अध्याय में प्राणायाम का उल्लेख करते हुए इसके पूर्व स्थान, काल, मिताहार और नाड़ी शुद्धि के अभ्यास को अनिवार्य बताते हुए आठ प्रकार के प्राणायाम का उल्लेख किया गया है। छठे अध्याय में ध्यान प्रकरण के अन्तर्गत स्थूल ध्यान, ज्योति ध्यान और सूक्ष्म ज्ञान के भेद से ध्यान के तीन प्रकार बतलाए गए हैं, जिसमें स्थूल ध्यान के अंतर्गत इष्ट देव की मूर्ति, ज्योति ध्यान के अंतर्गत तेजोमय ज्योति रूप ब्रह्म और सूक्ष्म ज्ञान के अंतर्गत बिंदुमय ब्रह्म कुंडलिनी शक्ति का ध्यान बतलाया गया है। यहां पर तीनों ध्यानों की विशिष्ट बतलाते हुए महर्षि घेरण्ड कहते हैं कि स्थूल ध्यान से ज्योति ध्यान 100 गुना श्रेष्ठ है और ज्योति ध्यान से सूक्ष्म ध्यान लाख गुना विशिष्ट है।

सातवें अध्याय समाधि में ध्यानयोग, नादयोग, रसानन्द योग, लयसिद्धयोग, भक्तियोग और राज योग ये छह प्रकार की समाधियों का वर्णन किया गया है। इनमें ध्यानयोग समाधि शाम्भवी मुद्रा से, नादयोग समाधि भ्रामरी प्राणायाम से, रसानन्दयोग खेचरी मुद्रा से लयसिद्धियोग योनि मुद्रा से, भक्तियोग समाधि मनोमूर्छा से और राजयोग समाधि कुंभक से सिद्ध होना बतलाया गया है।

इस प्रकार महर्षि घेरण्ड ने राजा चण्डकपालि के प्रति घटस्थयोग के विस्तार पूर्वक जानने के प्रश्न के क्रम में सप्त साधनों का विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए घेरण्ड संहिता का प्रतिपादन किया है।

8. हठरत्नावली

श्रीनिवास द्वारा रचित यह हठरत्नावली ग्रन्थ चार अध्यायों में विभक्त है।

प्रथम अध्याय :

इस अध्याय के अंतर्गत सर्वप्रथम योग को परिभाषित करते हुए चित्त की वृत्तियों के निरोध को महायोग कहा गया है। ये महायोग प्राणियों को मोक्ष प्रदान करने वाला है, जिसके चार प्रकार निम्नवत् हैंः

1. मंत्रयोग 2. लययोग 3. हठयोग 4. राजयोग

इसी अध्याय में आठ प्रकार के शोधन कर्मों का भी उल्लेख किया गया हैः

1. चक्रि 2. नौली 3. धौति 4. नेति 5. बस्ति 6. गजकरनी 7. त्राटक 8. मस्तकभ्रान्ति

इस प्रकार हठप्रदीपिका के शोधन कर्मों की अपेक्षा इसमें दो शोधन कर्म चक्रि और गजकरणी अतिरिक्त हैं। इन अष्ट शोधन कर्मों का उद्देश्य मात्र शरीर का वजन ही कम करना नहीं है, बल्कि इनका उद्देश्य षट्चक्रो को शुद्ध कर प्राणायाम के अभ्यास से सभी प्रकार के असंतुलन दूर करना है, जिससे एक स्वस्थ शरीर की प्राप्ति हो सकती है, जो कि मोक्ष का साधन है।

द्वितीय अध्याय :

इस अध्याय में प्राणायाम के नौ भेद और 10 मुद्राओं का वर्णन हुआ है, जिसमें हठप्रदीपिका में वर्णित 8 प्राणायाम के अतिरिक्त नवम् प्राणायाम भुजंगकरनी नाम से शामिल है।

तृतीय अध्याय :

इस अध्याय का प्रारंभ योग के आठ अंगों को स्वीकारते हुए प्रारंभ होता है, तदोपरांत मन को शुद्ध करने के लिए 10 प्रकार के मानसिक नियम और शरीर को शुद्ध करने के लिए 10 प्रकार के कायिक नियमों का उल्लेख किया गया है। मानसिक–कायिक नियमों के अतिरिक्त इस अध्याय में 84 आसनों का नाम सहित उल्लेख किया गया है।

चतुर्थ अध्याय :

इस अध्याय की विषय वस्तु समाधि है, जिसे यहां नादानुसंधान की संज्ञा दी गई है। नादानुसंधान चार चरणों में घटित होता है, जिसे क्रमशः आरंभावस्था, घटावस्था, परिचयावस्था और निष्पत्ति अवस्था के नाम से जाना जाता है। अध्याय के अंत में 14 नाड़ियों का उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार से हैः

1. सुषुम्ना 2. पिंगला 3. सरस्वती 4. कुहुः 5. यशस्विनी 6. बारूणी 7. गांधारी 8. शंखनी 9. पूषा 10. विश्वोदरी 11. जिह्वा 12 अलम्बुसा 13. हंसिनी और 14 इड़ा है।

उपरोक्त हठयोगिक ग्रन्थों में आसन और मुद्राओं की संख्या

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	आसनों की संख्या	मुद्राओं की संख्या
1	योगबीज	**01** वज्रासन	**03**
2	गोरक्ष संहिता	**02** सिद्ध और पद्म	**05**
3	शिव संहिता	**04** सिद्ध, पद्म, उग्र और स्वास्तिक	**10**

4	वशिष्ठ संहिता	**10**	.....
5	सिद्धसिद्धान्त पद्धति	**03** सिद्ध, पद्म और स्वास्तिक	.....
6	हठप्रदीपिका	**15**	**10**
7	घेरण्ड संहिता	**32**	**25**
8	हठरत्नावली	**84**	**10**

भाग (ब)

हठप्रदीपिका और घेरण्ड संहिता के आधार पर विभिन्न हठयोगिक अवधारणाएं और उनमें तुलना

इस भाग में हप्रदीपिका और घेरण्डसंहिता के आधार पर हठयोग एवं इनके अंगों की विवेचना करते हुए इन दोनों ग्रन्थों में तुलन की गयी है।

हठयोग का अर्थ, उत्पत्ति, उद्देश्य एवं लक्ष्यः

(क) हठप्रदीपिका

श्री आदि नाथ नमोऽस्तु तस्मै येनोपदिष्टा हठयोग विद्या।

विभ्राजते प्रोन्नतराजयोगमारो ढुमिच्छोरधिरोहिणीव।। (*हठप्रदीपिका* 1.1)

अर्थात् ''उन सर्वशक्तिमान आदिनाथ को नमस्कार है जिन्होंने हठयोग विद्या की शिक्षा दी, जो राजयोग के उच्चतम शिखर पर पहुँचने की इच्छा रखने वाले अभ्यासियों के लिए सीढ़ी के समान है।''

ऐसा माना जाता है कि भगवान शिव (आदिनाथ) ने सर्व प्रथम अपनी पत्नी पार्वती को हठयोग की शिक्षा दी। हठयोग के 'हठ' शब्द में 'ह' का अर्थ सूर्य और 'ठ' का अर्थ चन्द्र होता है। अतः हठ का अर्थ 'ह' और 'ठ' का अर्थात सूर्यनाड़ी और चन्द्रनाड़ी का मिलन है।

अतः हठयोग का अर्थ 'ह' और 'ठ' का मिलन है। इसके प्रथम वक्ता आदिनाथ और इसका उद्देष्य राजयोग की प्राप्ति है।

हठयोग के साधक एवं बाधक तत्व[1] :

[1]. *हठप्रदीपिका* 1.15–16